जनसत्ता

संकट और उम्मीद

भारत की अर्थव्यवस्था मंदी के दौर से गुजर रही है और इससे होने वाले संकट को भारत से लेकर विदेशी उद्योगपति तक बखूबी समझ रहे हैं। हालात ऐसे हैं कि सरकार के तमाम प्रयासों के बावजूद देश में विदेशी निवेशक आने से कतरा रहे हैं और घरेलू निवेशक भी घबरा कर बैठ गए हैं। ऐसे में अगर कुछ सर्वे उम्मीदों भरे नतीजे बताने लगें, तो आश्चर्य भी होता है और भविष्य के परिदृश्य को लेकर उम्मीदें भी बनती हैं। इन दिनों स्विटजरलैंड के शहर- दावोस में चल रहे विश्व आर्थिक मंच (डब्लूईएफ) के सालाना सम्मेलन में ऐसी ही रिपोर्टें देखने को मिल रही हैं जो दुनिया के देशों की आर्थिकी की हकीकत को सामने रख रही हैं, तो कारोबारियों के लिए आशा की किरणें भी पैदा कर रही हैं। प्राइस वाटरहाउस कूपर्स (पीडब्लूसी) के एक वैश्विक सर्वे ने बताया है कि भारत दुनिया का चौथा ऐसा बड़ा बाजार है, जहां कंपनियां तेजी से वृद्धि कर सकती हैं। इसमें कोई शक नहीं है कि चीन से लेकर अमेरिका तक के लिए भारत एक बड़ा बाजार है और भारत के साथ इन देशों का कारोबार काफी अहमियत रखता है। बल्कि सच्चाई ये है कि भले कितने विवाद हो जाएं, दोनों ही देश भारत को किसी कीमत पर इसीलिए नहीं खोना चाहते कि अगर भारत हाथ से निकल गया तो माल कहां खपाएंगे।

दुनिया के तिरासी देशों की बड़ी कंपनियों के सोलह सौ से ज्यादा मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सीईओ) अभी भी भारत के बाजार की ओर टकटकी लगाए हैं। इनका मानना है कि अमेरिका, चीन और जर्मनी के बाद भारत दुनिया का सबसे चौथा अच्छा बाजार है। इस सर्वे में शामिल भारत के चालीस फीसद सीईओ ये मान कर चल रहे हैं कि इस साल यानी 2020 में उनकी कंपनियों की आमद बढ़ेगी। ऐसी ही उम्मीद चीन के पैंतालीस फीसद सीईओ भी लगाए बैठे हैं। जाहिर है, भारत के बड़े बाजार से ही इनकी आमद बढ़ने का सिलसिला बनेगा और ये सपना तब साकार होगा, जब देश की अर्थव्यवस्था पटरी पर लौटने लगेगी, मांग और आपूर्ति का चक्र गति पकड़ने लगेगा। अभी तो हालत यह है कि अर्थव्यवस्था में जान फूंकने के लिए सरकार के सारे कदम निरर्थक साबित हो रहे हैं और आए दिन के आंकड़े गिरावट के रुख के साथ जनता से लेकर कारोबारियों तक में निराशा ही पैदा कर रहे हैं। साफ है कि अर्थव्यवस्था के प्रबंधन को लेकर सरकार के स्तर कहीं न कहीं ऐसी नीतिगत खामियां मौजूद हैं जो उम्मीदों भरे बाजार में निराशा के माहौल को खत्म नहीं कर पा रहीं।

देश-दुनिया के ज्यादातर अर्थशास्त्री इस बात से चिंतित हैं कि सरकार ने आर्थिकी को लेकर उतनी तवज्जो नहीं दी, जितनी दी जानी चाहिए थी। तीन साल पहले सरकार के नोटबंदी जैसे कदम ने अर्थव्यवस्था को भारी नुकसान पहुंचाया। हालांकि सरकार का यह दावा रहा है कि इससे कालेधन पर काफी हद तक लगाम लगी है। इसमें कोई शक भी नहीं कि नोटबंदी जैसे कदम के बाद रीयल एस्टेट क्षेत्र में भारी गिरावट आई और इसमें होने वाले सौदों में एक सीमा तक कालेधन के चलन पर लगाम लगी भी। लेकिन नोटबंदी ने छोटे-मझोले उद्योगों से लेकर रीयल एस्टेट क्षेत्र से जुड़े प्रमुख क्षेत्रों को जो नुकसान पहुंचाया, मौजूदा मंदी की जड़ें उसी में हैं। पर अभी भी वक्त नहीं निकला है। आमद बढ़ने को लेकर जितनी उम्मीदें अभी भारत और चीन को हैं, उतनी अमेरिका, फ्रांस, ब्रिटेन और जर्मनी को नहीं है। ऐसे में जरूरत इस बात की है कि भारत में आर्थिक प्रबंधन को चुस्त-दुरुस्त और पारदर्शी बनाया जाए, ताकि निवेशकों के कदम बढ़ें और वैश्विक कारोबार में हमारी हैसियत बने।

विवाद के सदन

देश के अलग-अलग राज्यों की विधानसभाओं में अक्सर इस तरह के विवाद उठते रहते हैं कि सदस्यों के आचरण या फैसलों को लेकर सदन के अध्यक्ष ने जो व्यवस्था दी, वह कितनी न्यायसंगत है! सदन में भागीदारी करने वाले दलों की ओर से ऐसे आरोप आम हैं कि चूंकि विधानसभा के अध्यक्ष किसी खास पार्टी के सदस्य के रूप में हैं, इसलिए उनका फैसला इससे प्रभावित होता है। ऐसी शिकायतें आमतौर पर किसी विधायक के किन्हीं कारणों से अयोग्य ठहराने के मामलों में आती हैं और बात अदालतों तक भी पहुंचती है। ऐसे में विधानसभा अध्यक्ष को मिली विधायी शक्तियां बहस के घेरे में आती हैं। हालांकि आम धारणा यही है कि सदन के अध्यक्ष को किसी खास दल के प्रति पक्षपात से बचना होता है और कोई भी व्यवस्था देते हुए पूरी तरह निष्पक्ष दिखना भी होता है। इस संदर्भ में मंगलवार को सुप्रीम कोर्ट ने एक अहम राय सामने रखी है जो राज्यों की विधानसभाओं में समय-समय पर खड़ी होने वाली ऐसी परिस्थितियों से निपटने के लिए एक जरूरी सलाह मानी जा सकती है। अदालत ने अयोग्य ठहराने की मांग करने वाली याचिकाओं को देखने के लिए संसद को सेवानिवृत्त न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक स्वतंत्र प्रणाली बनाने का सुझाव दिया है।

दरअसल, अदालत के सामने मामला मणिपुर विधानसभा का था, जहां वन मंत्री और अब भाजपा विधायक ने विधानसभा चुनाव कांग्रेस के टिकट पर जीता था, लेकिन बाद में उन्होंने पार्टी बदल ली थी। ऐसे में स्वाभाविक रूप से कांग्रेस ने उन्हें अयोग्य ठहराने की मांग की थी। लेकिन ऐसी स्थिति में इस तरह की शिकायतें रही हैं कि विधानसभा के अध्यक्ष चूंकि आमतौर पर सत्ताधारी दल के होते हैं, इसलिए वे अयोग्यता का आधार होने के बावजूद फैसला लेने में देरी करते हैं या फिर इस मसले पर उनकी व्यवस्था पर विवाद खड़ा होता है। इसी के मद्देनजर सुप्रीम कोर्ट ने भी विधानसभा अध्यक्ष की शक्तियों पर फिर से विचार का सुझाव दिया कि यह ध्यान रखने की जरूरत है कि अध्यक्ष खुद किसी राजनीतिक दल से आते हैं। जाहिर है, अदालत का इशारा इस ओर है कि सत्ताधारी खेमे में होने की महत्त्वाकांक्षा में विधानसभा में अलग-अलग पार्टियों के सदस्यों के दल-बदल की स्थिति में अगर विधानसभा अध्यक्ष की ओर से दी गई व्यवस्था अपने राजनीतिक दल के प्रति निष्ठा से जुड़ी होगी तो उस पर सवाल उठेंगे। ऐसी स्थिति से बचने के लिए ही शायद अदालत ने कहा कि संसद को इस पर फिर से विचार करना चाहिए कि अयोग्यता संबंधी याचिकाओं पर फैसला अध्यक्ष द्वारा लिया जाना चाहिए या नहीं।

यों सरकार में मंत्री बनने या कोई अन्य आकर्षक पद पाने की महत्त्वाकांक्षा में दल-बदल के मामले कोई हैरानी की बात नहीं है। इसका तर्क यह है कि किसी सदस्य को अपनी राय बदलने का अधिकार है। लेकिन लोकतांत्रिक हक की धारणा से मिलने वाली सुविधा से कई बार समस्याएं खड़ी होती रही हैं। ऐसे अनेक मौके सामने आते रहे हैं जब किसी राज्य में कुछ विधायक अपनी निष्ठा बदल लेते हैं और इससे कई बार सरकारें तक बदल जाती हैं। जब ऐसे विधायकों को अयोग्य ठहराने की मांग की जाती है तो यह आमतौर पर विधानसभा के अध्यक्ष के फैसले पर निर्भर करता है। ऐसे में अगर विधानसभा अध्यक्ष के फैसले अपनी राजनीतिक निष्ठा से संचालित होते हैं तो उस पर सवाल उठते हैं। इसलिए अगर इससे इतर कोई नई और स्वतंत्र व्यवस्था कायम की जाती है तो यह उचित ही होगा। लेकिन यह ध्यान रखने की जरूरत होगी कि मौजूदा व्यवस्था में जिस निरपेक्षता और ईमानदार फैसले की उम्मीद में जो नई प्रणाली बनाई जाए, वह कसौटी पर खरी उतरे।

कल्पमेधा

जब मुझे समझ में नहीं आता कि करूं या न करूं, तो हमेशा करता हूं।

- नेल्सन

सुरक्षा के लिए चुनौती

अभिषेक कुमार सिंह

बात चाहे आम लोगों की निजी जिंदगी से जुड़ी सूचनाओं की हो या देश की जासूसी की, स्मार्टफोनों और ऐप का संदेह में आना एक बड़ी चिंता की बात है। भारतीय टेलीग्राफ एक्ट 1885 एक्ट के मुताबिक ऐसी जासूसी का कृत्य दंडनीय है। पर समस्या यह है कि इसे साबित करना दिनोंदिन कठिन होता जा रहा है। देश में करोड़ों मोबाइलफोन धारक हैं और ज्यादातर के पास अब स्मार्टफोन हैं।

देश में मोबाइल फोन, खासतौर से स्मार्टफोन और उनके जरिए होने वाला सूचनाओं का आदान-प्रदान जीवन का एक जरूरी हिस्सा बन चुका है। आम जिंदगी में अब कोई व्यक्ति इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता कि वह किसी दिन स्मार्टफोन और उसमें मौजूद रहने वाले प्रोग्राम यानी ऐप के बिना रह सकता है। वैसे तो स्मार्टफोन ने जिस तरह हमारी जिंदगी का सुख-चैन छीना है, उस पर दुनिया भर के समाजशास्त्री और चिकित्सक गंभीर चिंता जताते रहे हैं और स्मार्टफोन के इस्तेमाल की लत को एक गंबीर बीमारी करार दे चुके हैं। लेकिन इधर कुछ अरसे से सरकार और उसकी एजेंसियों को ये स्मार्टफोन एक अन्य कारण से चिंता की वजह लग रहे हैं, खासतौर से सेना और खुफिया ब्यूरो (आइबी) को चिंता है कि कहीं ये स्मार्टफोन देश की जासूसी करने में मददगार तो साबित नहीं हो रहे हैं। चिंताओं का दायरा अमेरिका तक फैला है, जहां अमेरिकी सेना ने एक मशहूर चीनी ऐप 'टिकटॉक' को राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा बताते हुए उसे प्रतिबंधित कर दिया है। सवाल है कि क्या स्मार्टफोन सिर्फ आम लोगों की निजी सूचनाओं के अलावा राष्ट्रीय महत्त्व की सूचनाओं में सेंध लगाने का जरिया बन गए हैं।

हाल में भारतीय नौसेना में जासूसी और हनी ट्रैप के तमाम किस्से उजागर हुए हैं। जासूसी की आशंका के तहत पुलिस की खुफिया शाखा ने केंद्रीय खुफिया एजेंसियों और नौसेना के खुफिया विभाग के साथ मिल कर 'ऑपरेशन डॉल्फिन्स नोज' चलाया था, जिसमें नौसेना के सात कर्मचारियों और एक हवाला ऑपरेटर को देश के अलग-अलग हिस्सों से गिरफ्तार किया गया था। इसके बाद नौसेना के कर्मचारियों के लिए स्मार्टफोन पर चलने वाले मैसेजिंग ऐप, नेटवर्किंग साइट, ब्लॉगिंग साइट, कंटेंट शेयरिंग, होस्टिंग, ई कॉमर्स साइट पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। अब नौसेना का कोई भी जवान फेसबुक का इस्तेमाल नहीं करेगा। साथ ही, नौसेना के ठिकानों, डॉकयार्ड और युद्धपोतों पर स्मार्टफोन के इस्तेमाल पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया है। अब इस मामले की जांच का जिम्मा गृह मंत्रालय ने राष्ट्रीय जांच एजेंसी (एनआइए) को सौंप दिया है। ऐसे प्रतिबंध सिर्फ भारतीय नौसेना ने नहीं लगाए हैं, बल्कि अमेरिकी सेना ने भी टिकटॉक को अमेरिकी सैन्य कर्मियों के लिए प्रतिबंधित करते हुए कहा है कि इस ऐप का इस्तेमाल अमेरिकी की खुफिया जासूसी के लिए हो रहा था, जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा खतरे में पड़ गई थी।

जासूसी की भनक वैसे काफी पहले मिल गई थी। वर्ष 2017 में ही भारत सरकार और उसकी एजेंसियों ने अपने सुरक्षा बलों को एक खास निर्देश दिया था, जिसमें कहा गया था कि वे सुनिश्चित करें कि उनके जवानों के मोबाइल फोन में सोशल मीडिया वाले ज्यादातर ऐप न हों। अगर वे फोन में हों, तो उन्हें हटा दिया जाए। असल में, हमारी सरकार और खुफिया ब्यूरो जैसी एजेंसियों को यह महसूस हो रहा है कि चीन से बन कर आने वाले मोबाइल और चीनी कंपनियों के मोबाइल ऐप हमारे देश की सूचनाओं को सीमा पार पहुंचा रहे हैं और इस तरह स्मार्टफोन हमारे देश की जासूसी करने में सहायक साबित हो रहे हैं। यही वजह है कि वर्ष 2017 में जब खुफिया ब्यूरो के हवाले से यह आशंका जताई गई कि चीन के चालीस से ज्यादा ऐप हमारे स्मार्टफोनों को हैक कर सकते हैं। उसी दौरान सुरक्षा बलों को सलाह दी गई थी कि वे वीचैट, यूसी ब्राउजर, यूसी न्यूज, ट्रूकॉलर और शेयरइट आदि ऐप्स को अपने स्मार्टफोन से हटवा दें। आइबी के मुताबिक ये ऐप असल में चीन की तरफ से विकसित किए गए जासूसी के ऐप हैं और इनकी मदद से जो भी सूचना, फोटो, फिल्म एक दूसरे से साझा की जाती है, उसकी जानकारी चीन के सर्वरों तक पहुंच जाती है। इसी आशंका के तहत अगस्त, 2017 में, केंद्र सरकार ने स्मार्टफोन बनाने वाली चीन समेत कई अन्य देशों की इक्कीस कंपनियों को नोटिस जारी कर पूछा गया था कि वे स्पष्ट करें कि उनके मोबाइल फोन विदेश स्थित सवर्रों के माध्यम से देश से जुड़ी जानकारियों को बाहर तो नहीं भेज रहे हैं। सरकार का संदेह रहा है कि ओपो, वीवो, शाओमी और जियोनी के अलावा ऐपल, सैमसंग और भारतीय कंपनी माइक्रोमैक्स के स्मार्टफोन के जरिए चीनी खुफिया एजेंसियां भारतीय ग्राहकों की निजी जानकारियां चुरा रही हैं।

भारत में चीनी स्मार्टफोनों और उनके ऐप को जासूसी के लिए संदेह के घेरे में लेने के पीछे डोकलाम

विवाद की भूमिका भी बताई जाती है। वर्ष 2017 में इससे संबंधित सवाल का एक जवाब संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री रविशंकर प्रसाद ने लोकसभा में लिखित रूप से दिया था। उन्होंने बताया था कि देश की एक खुफिया एजेंसी (संभवतः आइबी) की तरफ से सरकार को वीचैट (वीफोन ऐप) को प्रतिबंधित करने की अपील मिली थी। इस अपील का मुख्य कारण यह है कि यह ऐप अपने उपभोक्ताओं को वीओआइपी प्लेटफार्म के जरिए कॉलिंग लाइन आइडेंटिफिकेशन (सीएलआइ) को चकमा देने की सुविधा प्रदान करता है। सीएलआइ को छिपाने से कॉल करने वाले की पहचान उजागर नहीं हो पाती है। ऐसे में फर्जी कॉल करने में वीचैट का इस्तेमाल किया जा सकता है। खास बात यह है कि इस ऐप के जरिए होने वाली कोई भी कॉल विदेश में स्थित सर्वर से होकर आती है, इसलिए कॉल करने वाले नंबर की पहचान या उसके स्थान का पता लगाना मुश्किल होता है। इसी बात ने सरकार को चिंतित कर रखा है।

सिर्फ चीनी स्मार्टफोन या ऐप से लोगों की जासूसी हो रही है, ऐसा नहीं है। जानकारी चुरा कर उसे बेचने के आरोप फेसबुक पर भी लग चुके हैं। असल में, फेसबुक या गूगल को यह पता रहता है कि कोई व्यक्ति किसी समय में ऑनलाइन क्या गतिविधियां करता रहा है। इसके आधार पर इन्हें व्यक्ति की ऑफलाइन गतिविधियों का भी पता चलता रहता है। इन गतिविधियों में एक व्यक्ति के एक स्थान तक आने-जाने, समय, खरीदारी आदि के ट्रेंड की जानकारियां होती हैं। फेसबुक तो यह कहता भी है कि वह अपने उपयोक्ताओं के बारे में विभिन्न स्रोतों से जानकारी जुटाता है, लेकिन वह यह नहीं बताता कि उपयोक्ता के बारे में किन स्रोतों से क्या जानकारियां ली गईं।

बात चाहे आम लोगों की निजी जिंदगी से जुड़ी सूचनाओं की हो या देश की जासूसी की, स्मार्टफोनों और ऐप का संदेह में आना एक बड़ी चिंता की बात है। भारतीय टेलीग्राफ एक्ट 1885 एक्ट के मुताबिक ऐसी जासूसी का कृत्य दंडनीय है। पर समस्या यह है कि इसे साबित करना दिनोंदिन कठिन होता जा रहा है। देश में करोड़ों मोबाइलफोन धारक हैं और ज्यादातर के पास अब स्मार्टफोन हैं। इन पर उन्होंने कौन-कौन से ऐप डाउनलोड कर रखे हैं, इसकी जानकारी लेना भी आसान नहीं है, क्योंकि कई तो सीधे विदेश स्थित सर्वरों से सूचनाओं का आदान-प्रदान करते हैं। ऐसे दो ही रास्ते हैं- एक, या तो फेसबुक, गूगल से लेकर हर प्रमुख वेबसाइट और ऐप निर्माताओं से कहा जाए कि वे भारत में ही अपना सर्वर स्थापित करें। चीन ने ऐसा ही किया है। दूसरा रास्ता है कि देश में फेसबुक-गूगल आदि उपयोगी चीजों के विकल्प पैदा किए जाएं। चीन ने इस मामले में भी उदाहरण सामने रखे हैं और इन सभी के बेजोड़ विकल्प बना कर विदेशी ऑनलाइन दासता व जासूसी की आशंकाओं को धता बताई है। सबक यही है कि हमारे देश में भी गूगल, व्हाट्सऐप, वीचैट और फेसबुक-इंस्टाग्राम के देसी विकल्प पैदा किए जाएं। सरकार को चाहिए कि वह इन पर पाबंदी के साथ इंटरनेट के देसीकरण के प्रयासों को बढ़ावा दे, ताकि ऑनलाइन जासूसी की आशंकाओं को खत्म किया जा सके।

नफरत के दौर में

नरपत दान चारण

दुनिया मेरे आगे

कभी-कभी बहुत तकलीफ देने वाले हादसे बाकी दुनिया को बहुत बड़ा पैगाम दे जाते हैं। ऐसी ही एक घटना, जिसने न केवल मुझे, बल्कि बहुत बड़ी बिरादरी को झकझोर कर रख दिया। हाल ही में दिल्ली में भीषण अग्निकांड हुआ, जहां एक तीन मंजिला इमारत में आग लगने से दर्जनों बेगुनाह मौत के आगोश में समा गए। उस घटना के वक्त सबसे ऊपरी मंजिल पर फंसे लोगों में से एक मुसलिम युवक मुशर्रफ भी था। चारों ओर आग से घिरी इमारत और कमरे के भीतर दम घोंटते धुएं के बीच वह अपनी जिंदगी के आखिरी पल सामने देख रहा था और उसी वक्त उसने आखिरी फोन अपने परिवार या मजहब के किसी सदस्य या रिश्तेदार को नहीं करते हुए, अपने बचपन के हिंदू दोस्त मोनू अग्रवाल को किया।

अब इन दोनों का इतना परिचय ही काफी है कि मुशर्रफ और मोनू अग्रवाल दोनों की बचपन से गहरी दोस्ती थी और दोनों को एक दूसरे पर बहुत ज्यादा यकीन था। यहां बात गहरी निकल कर सामने आती है कि शायद कोई बिरला इंसान ही हो सकता है, जो जिंदगी के आखिरी लम्हे में अपने घर वालों को या रिश्तेदारों को याद न करे। लेकिन मुशर्रफ ने जिंदगी के आखिरी लम्हे में फोन पर अपने बचपन के अजीज दोस्त मोनू से कहा- 'आग लग गई भाई। आज नहीं बच पाऊंगा। भाई सिर्फ तुम पर भरोसा है! मेरे परिवार को जैसे-तैसे चला देना... आज तो मैं गया... आ जाना लेने... लेकिन यह मत सोचना कि मैं चला गया। हमेशा तुम्हारे साथ रहूंगा।' इतना कहने के बाद मुशर्रफ की आवाज बंद हो गई। इस बातचीत का ऑडियो जिसने भी रूह से सुना, उसके भीतर एक गहरा सन्नाटा छा गया। शैतानी जिस्म में भी इंसानियत का संचार हो गया। दिमाग के कोने में बसे आवेश, नफरत, द्वंद्व और मजहबी पागलपन किसी गहरे रसातल में डूब से गए।

इस जिक्र से यह जाहिर होता है कि यह बातचीत महज एक घटना की गंभीरता को ही नहीं दर्शाती है, बल्कि यह इससे ऊपर मजहब और रिश्ते की असली कहानी बयां करती है। मजहब का सही मायने में पाठ पढ़ाती है। विडंबना है कि आज जब देश, दुनिया और समाज में मजहब के नाम पर बांटने और तोड़ने वाली बातों को हवा मिल रही है। तथाकथित मजहबी ठेकेदारों के बीच मजहबी कट्टरता के नाम पर इंसानों के बीच नफरत की दरारें डालने की होड़ मची है, अपने-अपने हिसाब से मजहब की परिभाषाएं गढ़ी जा रही हैं, आम आदमी के जेहन में मजहब के नाम पर दुश्मनी और खौफ पैदा करने की हरकतें हो रही हैं, 'मारो-मारो' का शोर मचा हुआ है... तब कोई नेक इंसान अपने आप को इस फानी दुनिया में अकेला और बहुत ठगा हुआ महसूस करता है।

हालांकि इस तेरा मजहब, मेरा मजहब के वाक युद्ध में जिम्मेदार बहुत से हैं। इसकी गुनहगार ऐसी ताकतें भी है, जो मजहब और कबीलों के नाम पर आम अवाम को बांट कर रखना चाहती है, ताकि उनकी सल्तनत सलामती से चलती रहे। ऐसे दौर और माहौल में इन दो अलग-अलग मजहब के दोस्तों की दर्द भरी और दिलकश कहानी न केवल इंसानी दिलों में इंसानियत भर देती है, बल्कि मजहब की एक नई इबारत लिखती नजर आती है। और वह इबारत लिखी जा रही है अपने बदन को आग में जलाने के बाद भी।

इस पाक रिश्ते की गहराई इतनी अधिक थी कि उन्हें हिंदू या मुसलमान होने के गुमान का कभी अहसास तक नहीं हुआ। अगर एहसास हुआ भी तो, उन्होंने सही मायने में मजहब को बेदाग रखा। उन्होंने सही मायनों में महजब की किताबों की पाक लाइनों को जिंदा रखा। यही तो बात थी, तभी तो नफरतों के दौर में केवल इंसानियत उनके भीतर बची थी। आज जो लोग सीने में सद्भाव की जगह द्वेष को पनाह दे रहे हैं। उनके लिए यह एक बहुत बड़ी सीख है मजहब के सही मायने को जानने-समझने की और इंसानियत को असलियत में कबूल करने की।

यहां यह समझना भी जरूरी है कि आखिर मजहब के सही अर्थ में मायने क्या है! क्या वही है जो हम केवल सुनते आ रहे हैं? क्या कभी खुद किसी धर्म की किताब का अनुशीलन किया? क्या इंसानियत को सही मायने में समझने की कोशिश की? या फिर भेड़चाल की तरह दूसरों के बनाए रंगों की धर्म-ध्वजा लेकर आपसी कलह, कट्टरता और जेहाद का राग अलापते रहे? या फिर बांटने वाली सियासत के दलदल में फंस कर मौकापरस्त होकर अपना उल्लू सीधा करते रहे?

मैं ज्यादा तो नहीं, लेकिन एक दुनियावी तालीम प्राप्त इंसान होने के नाते यही कहूंगा कि हम सब अल्लामा इकबाल की वे पक्तियां जरूरत सुनते और कहते रहते हैं कि 'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना।' मजहब के नाम पर चंद लोग जो बैर करना सिखा रहे है, उनसे बचना जरूरी है और साथ ही जो इकबाल कह गए, हमें उस बात को जेहन में उतारना होगा। केवल बोलने मात्र से काम नहीं चलेगा। हमारी रूह जो सच और सही का आभास करे, हमें वही करना चाहिए। आदमजात और बिरादरी की भलाई इसी में है।

किसका विकास

'चिंता की बात' (संपादकीय, 22 जनवरी) और 'विषमता का विकास' (संपादकीय, 22 जनवरी) पढ़ा। किसी भी लोकतांत्रिक और कल्याणकारी राज्य का यह प्रथम दायित्व और अभीष्ट कर्तव्य है कि वह ईमानदारी से अपने राज्य में ऐसी नीतियों को लागू करे, ताकि देश के हर नागरिक को उसे जीवन की मूल आवश्कताओं, जैसे भूख मिटाने को समय पर अन्न, तन ढकने के लिए वस्त्र और सिर छिपाने के लिए एक अदद घर मिल जाए। केवल 'सबका साथ सबका विकास' का नारा लगा कर इसके ठीक विपरीत, जनविरोधी नीतियों को अपनाने से पिछले तीन साल में भारत की सत्तर फीसद आबादी की कुल संपत्ति के चार गुने से भी अधिक संपत्ति कुछ शीर्ष धनाढ्यों के पास इकट्ठा हो गया है। दूसरी तरफ इसी देश में लगभग करोड़ों लोग खाने पर संकट झेलते हुए रात में भूख सो जाते हैं। ऐसे विद्रूप विकास पर और अपनी पीठ खुद ही थपथपाने वाले सत्ता के कर्णधारों के इस विकृत सोच को क्या कहा जाए?

कुछ कड़वे तथ्य 'वर्ल्ड इकॉनोमिक फोरम' ने स्विट्जरलैंड के दावोस में अपनी 'ग्लोबल सोशल मोबिलिटी इंडेक्स' में उजागर किया है। इसके मुताबिक दुनिया के 82 देशों की सूची में भारत का 76 वें स्थान पर होना इसके 'सबका साथ सबका विकास' की कथित कहानी की हकीकत का बयान कर देती है। यह सूचकांक किसी देश के लोगों के स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा को ध्यान में रखकर बनाया जाता है। जाहिर है, लगभग हर मामले में भारत की स्थिति अत्यंत शर्मनाक है। लाखों लोगों के अपनी नौकरियों से हाथ धोने से उनकी क्रयशक्ति बिल्कुल खत्म होकर रह गई है, जिससे पूरे देश में आर्थिक मंदी बढ़ती ही जा रही है। स्थिति यह है कि यहां के बाजार सामान से भरे पड़े हैं, लेकिन उनके खरीदार नहीं हैं।

अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकारों की पैरोकार संस्था 'ऑक्सफैम' की 'टाइम टू केयर' नामक रिपोर्ट के अनुसार भारत में 70 प्रतिशत आम जनता की कुल संपत्ति के चार गुना धन नाममात्र के कुछ पूंजीपतियों के पास है। इनके पास कितना धन है, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि भारत के एक साल की संपूर्ण बजट से भी ज्यादा इन पूंजीपतियों के पास संपत्ति है। इस विषम स्थिति को देखते हुए कहा जा सकता है कि लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का उद्देश्य ही खत्म हो जाता है, जहां चंद पूंजीपतियों के हित को ध्यान में रख कर नीतियां बनाई जाती हैं और देश के 99 प्रतिशत लोगों को,उनके हाल पर छोड़ दिया जाता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में हाल के वर्षों में दुर्गति के बारे में कई वित्तीय संस्थाओं ने भविष्यवाणी की है कि अगले दो सालों में भी भारत की आर्थिक स्थिति सुधरने की गुंजाइश नहीं के बराबर है, क्योंकि दुनिया भर के बड़े निवेशक भारत में अपना पैसा निवेश करने से हिचक रहे हैं। उल्टे वे भारत से अपने निवेशित पूंजी को निकाल कर बाहर के उन देशों में अपना पैसा निवेश कर रहे हैं, जहां का माहौल उनके लिए ठीक है।

आज भारत में एक कहावत कही जा रही है कि 'हर मर्ज की दवा अदरक ही नहीं हो सकती', लेकिन भारत के वर्तमान सत्ता के कर्णधार यहां की हर समस्या का, चाहे सरकारी, अर्धसरकारी या सार्वजनिक उपक्रमों का निजीकरण करके उसके समाधान ढूंढ़ने की निर्रथक कोशिश कर रहे हैं। इसका दुष्परिणाम यह हुआ है कि शिक्षा, स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों के बेहद मंहगे हो जाने से उसका फायदा केवल एक छोटा धनाढ्य वर्ग ही ले पा रहा है, जबकि,इसी देश में दूसरे गरीब लगभग 70 प्रतिशत लोग शिक्षा से दूर होते जा रहे हैं और प्राइवेट अस्पतालों में अत्यंत मंहगे हो चुके ईलाज के कारण वे विभिन्न बीमारियों से ग्रसित होकर लाखों की तादाद में असमय मौत के मुंह में चले जा रहे हैं।

● *निर्मल कुमार शर्मा, गाजियाबाद*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

इंटरनेट प्रदूषण

हर बार जब हम किसी को ई-मेल भेजते हैं तो हम ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ावा दे रहे होते हैं। यकीनन यह बात जितनी हैरान करने वाली है, उतनी ही सच भी है। जितने ज्यादा ई-मेल आप भेजते हैं, उतनी ही ऊर्जा की खपत होती है, जिससे कार्बन डाईऑक्साइड का स्तर वायुमंडल में बढ़ता जाता है। ब्रिटेन में हुए एक सर्वे में पाया गया है कि एक ई-मेल से हम एक ग्राम कार्बन डाईऑक्साइड बना रहे हैं। अकेले यूनाइटेड किंगडम में हर रोज 64 मिलियन बेकार मेल भेजे जाते हैं। वहीं 71 प्रतिशत ब्रिटेनवासी धन्यवाद संदेश न मिलने पर ध्यान नहीं देते हैं। ऐसे में अगर हमें ग्लोबल वार्मिंग को कम करना है तो बेवजह के मेल जैसे धन्यवाद मैसेज भेजने बंद करने होंगे। अगर हम रोज एक मेल कम भेजेंगे तो साल में 16,433 टन कार्बन डाईऑक्साइड का उत्सर्जन होने से बचा सकते हैं।

● *प्रतीक बाजपेई, लखनऊ*

दिखावे का सरोकार

कश्मीर में जनप्रतिनिधियों को ले जाने के कदम को कैसे देखा जाएगा? कश्मीर के बारे में क्या प्रचार हो रहा है? बताया जा रहा है कि घाटी में स्थिति सामान्य है, स्कूल-कॉलेज और व्यापार पहले से अधिक अच्छे ढंग से चल रहे हैं, कानून व्यवस्था दुरुस्त है, 5 अगस्त के बाद आतंकवाद की एक भी घटना नहीं घटी आदि-आदि। फिर यह बात समझ से परे है कि 18 से 25 जनवरी तक केंद्र के 36 मंत्री घाटी का दौरा क्यों करेंगे? अपने मंत्रालयों के जरूरी कामों को त्याग कर कश्मीरियों को क्या समझाया जाएगा? क्या वहां की अवाम को यह नहीं मालूम है कि अनुच्छेद-370 को निष्प्रभावी होने से उन्हें क्या फायदे हो रहे हैं? लगता है सरकार कश्मीर में बुरी तरह फंस चुकी है। बाहर जो तस्वीर चमकाई जा रही है, अंदर वैसा है नहीं। अगर होता तो विदेशी राजनयिकों को खुद के खर्च पर वहां ले के जाने की जरूरत नही पड़ती। देश के नेताओं को वहां जाने पर प्रतिबंध नहीं लगाना पड़ता। घाटी के प्रमुख नेताओं को नजरबंद नहीं करना पड़ता। 165 दिनों से कश्मीरियों को बिना इंटरनेट के नहीं रहना पड़ता।

● *जंग बहादुर सिंह, गोलपहाड़ी, जमशेदपुर*

www.readwhere.com